हाँ! मैं आत्मा हूँ

श्रीमती रंजना राजीव श्रीवास्तव

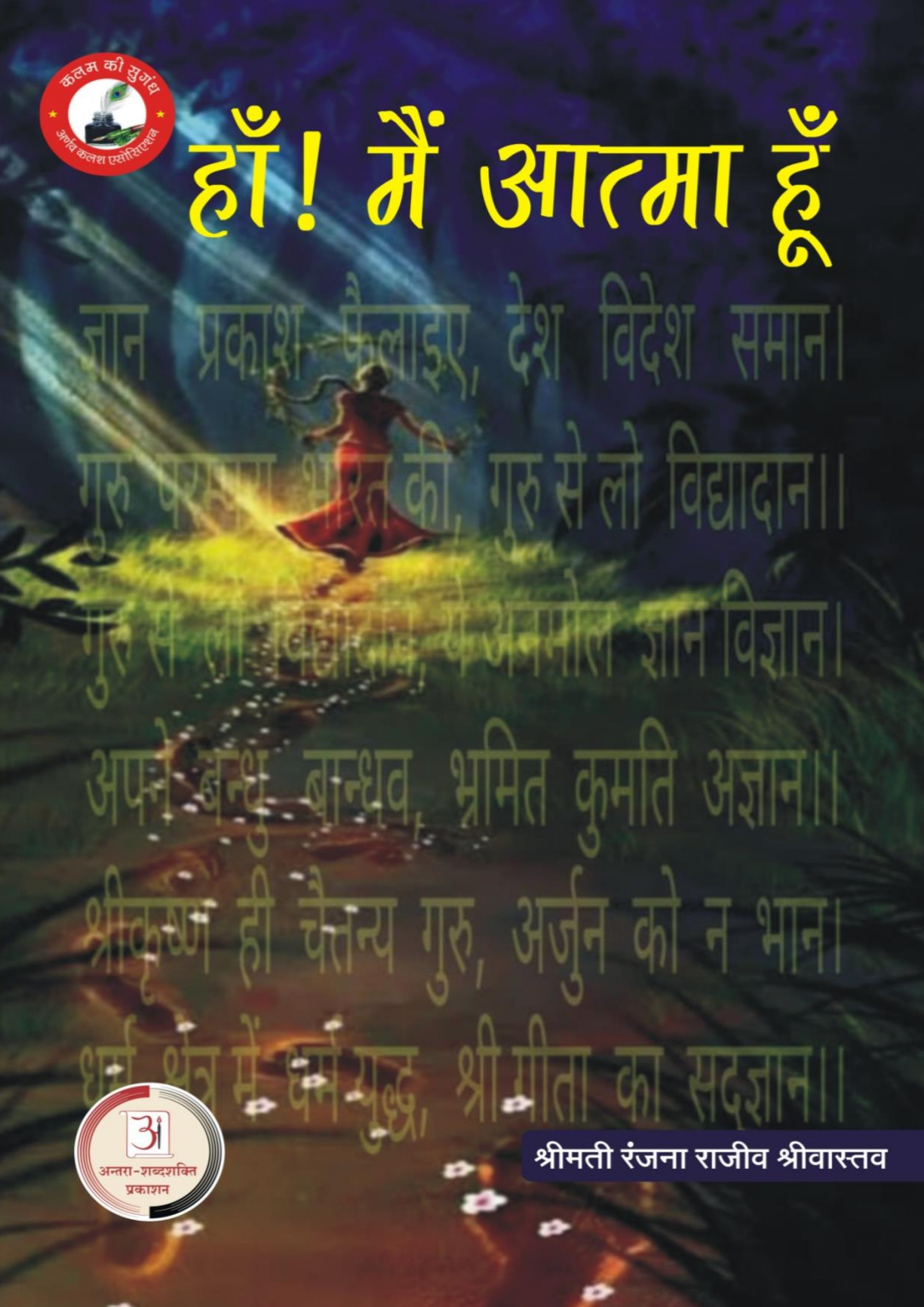

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

हाँ! मैं आत्मा हूँ

(कलम की सुगंध छंदशाला)

श्रीमती रंजना श्रीवास्तव

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-232-6
संपादक- अनिता मंदिलवार "सपना"
आवरण चित्र - संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- डॉ. प्रीति समकित सुराना, 15 नेहरू चौक, वारासिवनी,
जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
मोबाईल- 9424765259, 9009465259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020, श्रीमती रंजना श्रीवास्तव
मूल्य- 90.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
THE BOOK WRITTEN BY RANJANA RAJIVE SHRIVASTAVA
वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

पुरोवाक्

सच्चिदानन्द रूपाय विश्वोत्पत्यादि हेतवे।
तापत्रय विनाशाय श्रीकृष्णाय वयं नुमः।।

सच्चिदानन्द भगवान श्रीकृष्ण का तेजोमय आध्यात्मिक सौन्दर्य सत् चित् आनन्दस्वरूप है और उनका चिन्तन-आनन्द आत्मबोध की प्रथम अनुभूति। अवतारवाद की अवधारणा स्वयं परमेश्वर का निर्णय है, प्रकृति पर प्रभुत्व जमाने की उत्कट लालसा का अन्त है। भौतिक विषयों में अनुरक्त होने के कारण मानव जन्म जन्मान्तर के चक्र में फँसकर अपने आत्मस्वरुप को नहीं पहचान पाता है।

आत्मा परमात्मा के विषय को, अपनी इस पुस्तक में छन्दबद्ध करने का मैंने निश्चय किया। भारतीय संस्कृति व दर्शन के परिचायक पौराणिक और आध्यात्मिक विषय मेरी आत्मा में समाए हुए हैं, शनैः शनैः यह अनुभव होने लगा। संस्कृत में रुचि शायद पूर्वजन्म के कर्मों का फल है। कर्मफल के सिद्धान्त में मेरा पूर्ण विश्वास रहा है। भगवद्गीता पढ़ने के पश्चात एकात्मवाद के सिद्धान्त को जानने का प्रयत्न करने लगी। आत्मा ही हम सबका वास्तविक परिचय है, मात्र देह परिवर्तन व भौतिक व्यवधानों के कारण आत्मा को पहचानना कठिन होता है। इस गूढ़ विज्ञान को समझने के लिए पूर्णकृष्णमय होकर विषयों से विरक्त होना पड़ता है और जिसने इसे पा लिया वह परमधाम का वासी हो जीवन मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है। मेरी इस पुस्तक के पात्र आध्यात्मिक गुरुओं के गुरु स्वयं भगवान श्रीकृष्ण हैं। मैं प्रभु चरणों में नतमस्तक होकर आज अपने पाठकों के समक्ष अपना परिचय देती हूँ कि हाँ! मैं आत्मा हूँ।

इस गूढ़ विज्ञान के केन्द्रीय भाव को भली भांति समझने के लिए प्रतिदिन भगवद्गीता का पाठ करना व उसे आत्मसात करना, मेरे दैनिक क्रियाकलापों का अभिन्न अंग बन गया। इस पठन-पाठन में, मैं सुध बुध भूलकर इतना डूबती चली गई कि परिवार से और समाज से मानों कटती चली गई। दिमाग में बस एक ही विचार संकल्प बनकर रहने लगा। कलम चली तो फिर चलती ही गई।

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन के माध्यम से प्रकाशित यह पुस्तक हाँ! मैं आत्मा हूँ श्रीमद्भगवद्गीता के तेजोमय प्रकाश में धुँधला सा भी अस्तित्व पा सकेगी अथवा नहीं, इसका चिन्तन, लेशमात्र भी मन में नहीं रहा। कर्म, फल की इच्छा से न करना ही, गीता का ज्ञान है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपने विश्वरूप का दर्शन करवाया और द्वितीय अध्याय के सैंतालीसवें श्लोक में मानों जीवन रथ को सही दिशा में मोड़ दिया -

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

दीप दीर्घा

दैवी मनीषा का अद्‌भुत अविष्कार है "श्रीमद्‌भगवद्‌गीता"। समय के शाश्वत प्रवाह की अनुगूँज। विश्व चेतना के कण्ठहार में "कौस्तुभ मणि" सी दिप दिप करती हुई। यह तत्त्वदर्शन का उत्स ही नहीं, चिरन्तन आलोकप्रसू दिनमणि सी है। कर्मवाद की अनमोल व्याख्या से चमत्कृत करती हुई।

पूर्वकाल में गीता रहस्य, गीता सार जैसे कितने ही ग्रन्थ लिखे गये, पर "रंजना श्रीवास्तव" ने "दर्शन" को "छान्दस विधा" में आवेष्टित कर काव्यात्मक प्रतिष्ठा दी है। रंजनाजी की आर्ष साहित्य के प्रति आसक्ति सर्वश्रुत है। उनके चिन्तन की परिधि में जिसकी महक समायी रहती है।

संक्रमण काल में भाषायी अभिजात्य की सतत उपेक्षा हो रही है। ऐसे में कवयित्री का पक्का विश्वास है कि संस्कृतनिष्ठ हिन्दी हमारी धरोहर है, उसकी रक्षा होनी चाहिए। इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने "हाँ! मैं आत्मा हूँ" का सृजन किया है।

"छान्दोग्य उपनिषद" में कहा गया है- "आत्मा को जानकर ही हम सुख दुःख से मुक्त हो सकते हैं।" श्रुति कहती है- "आत्मा ही देखने योग्य है। दर्शनीय है।" भौतिक स्वरुप को आध्यात्मिक निष्कर्ष तक अर्थात् द्‌वैत से होकर अद्‌वैत को प्राणगत करवाती हुई श्रीमद्‌भगवद्‌गीता सर्वकाल प्रणम्य है।

रंजनाजी की यह आठवीं कृति है। उपभोक्तावादी परिवेश के बीच उनकी कृति मंदिर की आरती, पूजा के दीप सी लगती है। ईश्वर की आखर प्रतिमा।

भगवान कृष्ण भक्तों के लिये कहते हैं--

"ये यथा मां प्रपद्‌यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्"।

इस कृति को पाठक भी साहित्य, दर्शन या आध्यात्मिक स्त्रोत, चाहे जिस रूप में ग्रहण करें, उन्हें लाभान्वित होना ही है। विद्‌वज्जनों के मध्य इसका हार्दिक स्वागत होगा। अस्तित्त्व के लिये जागरूकता ही भक्ति है। "हाँ ! मैं आत्मा हूँ"-- का सारांश यही तो है।

शुभकामनाएँ

इन्दिरा किसलय
(कवयित्री/लेखिका)

हाँ! मैं आत्मा हूँ-समीक्षक की दृष्टि से

हाँ! मैं आत्मा हूँ- कवयित्री श्रीमती रंजना श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत छान्दस विधा में निबद्ध एक कृति है। कवयित्री श्रीमती रंजना श्रीवास्तव ने अपनी रचनाधर्मिता की सतत सांस्कृतिक प्रक्रिया का निर्वहन बखूबी किया है, जिसका सीधा सम्बन्ध गीता के उपदेशों से है, जो आत्मा परमात्मा के मिलन की साक्षी है। जिसका अन्योन्य सम्बन्ध जनजीवन से है। जन और जीवन से अलग होकर किसी भी कविता के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सक्ती। कल्पना और विचार झंझावात के इसी अस्तित्व को सुरक्षित रखते हुए रंजना जी ने मानवीय मूल्यों एवं सामाजिक-आध्यात्मिक सरोकारों का पोषण किया है। कवयित्री में अनुभूति की ताजगी एवं अभिव्यक्ति की मौलिक्ता दिखाई पड़ती है।

हाँ! मैं आत्मा हूँ... रंजना जी की आध्यात्मिक तर्ज पर रची गई एक अनूठी कृति है। इस कृति में उन्होंने छान्दस विधा को अपनी मौलिक सम्पदा से समृद्ध किया है। रचनाओं में लयात्मकता, तुकान्त शब्दावली की ध्वन्यात्मकता तथा गेयता प्रभावशाली रूप से विद्यमान है। कवयित्री रंजना ने अंतर्मन एवं स्वप्न के दरवाजे खोल कर अपनी कलम को उड़ने की आजादी दी है। नियमों के पिंजरे से बाहर निकालकर अभिव्यक्ति के पंछी को गगन नापने की स्वतन्त्रता दी है। कृति में प्रयुक्त भाषा शैली सरल, सहज, बोधगम्य एवं संप्रेषणात्मक होते हुए कहीं-कहीं संस्कृत की क्लिष्ट शब्दावली का भी बोध कराती है। रंजना जी की भाषा एक समृद्ध भाषा है जो मन मस्तिष्क में स्वयं प्रतिष्ठित होकर अपनी छाप छोड़ जाती है। रंजना जी ने पाठकों के समक्ष वह गूढ़ आध्यात्मिक विषय प्रस्तुत किया है, जिसे आत्मसात करने के लिए मन को विचारशून्य करना अति आवश्यक है।

कवयित्री रंजना श्रीवास्तव का आत्मज्ञान के मार्ग पर रखा गया यह पहला कदम है और अगला कदम बढ़ाने के लिए प्रेरित करती है यह कृति हाँ ! मैं आत्मा हूँ। रंजना जी ने जीवन दर्शन को काव्यात्मक प्रतिष्ठा देते हुए महान सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा का कार्य बखूबी किया है। कर्म फल की इच्छा न रखने वाली रंजना जी ने श्रीमद्भगवद्गीता को मानों आत्मसात कर इस कृति में जना है।

कवयित्री की यह कृति आध्यात्मिक लाभ के साथ-साथ समाज को जीवन दर्शन एवं स्व से परिचित करवाने में सफल होगी, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। स्वभाव से कोमल एवं भावुक प्रकृति की कवयित्री रंजना श्रीवास्तव ने निरन्तर साहित्य अनुशीलन करते हुए इस कृति में जीवन प्रबन्धन की गूढ़ शिक्षा का गुरुभार मानो अपनी कलम को दे दिया है।

ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग से ओतप्रोत यह कृति साहित्य जगत में सदा स्मरण की जाएगी, इसी आशा के साथ कवयित्री को शुभकामनाएँ..

डॉ. संगीता ठक्कर
विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
भवन्स बी.पी. विद्या मंदिर,
श्रीकृष्ण नगर, नागपुर।

परिवार के सदस्यों की शुभकामनाएँ

हमारे परिवार की कवयित्री व लेखिका, हम सब की लाडली रंजना, निरन्तर साहित्य साधना में संलग्न रहते हुए, अपने साहित्यिक, सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करती रहती है। हाँ! मैं आत्मा हूँ- रंजना की नवीन कृति सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत होने के लिए मात्र एक कदम दूर है।

श्रीमद्भगवद्गीता पर आधारित इस आध्यात्मिक पुस्तक की सामाजिक स्वीकृति और सफलता के लिए रंजना को बहुत बहुत शुभकामनाएँ।

हमें तुम पर गर्व है।

श्रीवास्तव परिवार

एवं सिन्हा परिवार

(1)

नैया बीच मझधार में, न दिखे किनारा ठाँव।
तिनका लेकर ढूँढ रही, आशा का एक गाँव।।
आशा का एक गाँव, विस्तार कहीं उस पार।
अबकी बेर न करो देर, प्रभु आकर अब तार।।
कहे रंजना कृपासिन्धु, हे कृष्ण मुरारी भैया!
रस्ता देखूँ हे ईश्वर, पार करो मेरी नैया।।

(2)

प्राणी शाश्वत जीव है, भूत भविष्य है समान।
शाश्वत सब जीव हैं, एक आत्मा की बान।।
एक आत्मा की बान, आवास बदलता जाता।
भौतिक वस्त्र का तमस्, बन्धन मुक्ति में लाता।।
सदेह विदेह का विश्लेषण, परमेश्वर की वाणी।
मुक्त होता भव बन्धन, कृष्ण भक्ति से प्राणी।।

(3)

ज्ञान प्रकाश फैलाइए, देश विदेश समान।
गुरु परम्परा भारत की, गुरु से लो विद्यादान।।
गुरु से लो विद्यादान, ये अनमोल ज्ञान विज्ञान।
अपने बन्धु बान्धव, भ्रमित कुमति अज्ञान।।
श्रीकृष्ण ही चैतन्य गुरु, अर्जुन को न भान।
धर्म क्षेत्र में धर्म युद्ध, श्रीगीता का सद्ज्ञान।।

(4)

नीर तरलता विलग नहीं, नहीं अनल व ताप।
जीव से कर्म विलग नहीं, यही बड़ा संताप।।
यही बड़ा संताप, कर्म का अपना अलग रंग।
आदि नहीं न अन्त, कर्म बन्धन में प्रत्यंग।।
अधर्म से जुड़ा विचार, है मन्द मति अधीर।
सनातन धर्म में लगी मति, पहचाने क्षीरनीर।।

(5)

बढ़े लालसा का मुखसुरसा, असंतोष का जाल।
राह में छोड़ा धर्म सत्य को, रहता सदा मलाल।।
रहता सदा मलाल, और अधिक की रहे तलाश।
जीवन सादा कृष्ण, प्रिय जैसे फूल पलाश।।
बाँधो तुम गाँठ अगर, सन्तोष का रहे अभाव।
प्रगति न होवे एक पल, न यश का रहे प्रभाव।।

(6)

गीता का एक गूढ़ रहस्य, एक आत्मा है जीव।
एक दूजे से भिन्न नहीं, दोनों ही एक जीव।।
दोनों ही एक जीव, आत्मा नित्य निराकार।
सत्य चिरन्तन जीव, भक्ति जीवन आधार।।
भक्त पार्थ का भाग्य, उद्धृत कृष्णमुख से गीता।
मैं भी सुनूँ शिष्य बनकर, कृष्ण सुनाओ गीता।।

(7)

परिवर्तन दिखे शरीर में, आत्मा अपरिवर्तित।
अजन्मा है अमरात्मा, शाश्वत व अपराजित।।
शाश्वत व अपराजित, भूत भविष्य वर्तमान।
परिवर्तन का न प्रभाव, अजन्मा और महान।।
न भौतिकता से क्षीण, न ही वृद्धि का आवर्तन।
न आत्मा की उपसृष्टि, न आत्मा में परिवर्तन।।

(8)

आत्मा शस्त्र से खण्डित नहीं, न अग्नि से ज्वलित।
जल गीला न कर सके, वायु करे न शोषित।।
वायु करे न शोषित, आत्मा अविनाशी निराकार।
आधुनिक विज्ञान के लिए, अज्ञात और निराधार।।
मायावादी भी असफल, गूढ़ व्याख्या परमात्मा।
मोहमुक्त ही जान सके, सनातन विभु आत्मा।।

(9)

इन्द्रिय संयम का ज्ञान मिला, आत्मबोध उत्कंठा।
आत्मा परमात्मा रहस्यमय, ज्ञान की आकंठा।।
ज्ञान की आकंठा, भगवद्गीता गुप्त विज्ञान।
श्रीकृष्ण का उपदेश है, आत्म अनात्म का ज्ञान।।
काम फल है विकृत, रखो यौगिक नियम कायम।
ज्ञाननाशक काम का, दमन ही इन्द्रिय संयम।।

(10)

शरणागत भगवान में, आत्मा जब हो स्थित।
कृष्ण भक्ति में आसक्ति, मन बुध्दि से प्रस्थित।।
मन बुध्दि से प्रस्थित, कर्मेन्द्रियाँ पदार्थ से श्रेष्ठ।
मन इन्द्रियों से बड़ा, सर्वश्री आत्मा सर्वश्रेष्ठ।।
दन्तविहीन सर्प सम, इन्द्रियों की क्षीण ताकत।
आत्मा ही एक स्वामी, लक्ष्य कृष्ण शरणागत।।

(11)

आत्मा विषयक ज्ञान के, श्रोता हैं कम लोग।
अच्छी संगत बैठकर, लाभ उठाते लोग।।
लाभ उठाते लोग, कठिन ईश्वर को समझना।
अणु आत्मा अज्ञान में, विभु आत्मा को पढ़ना।।
परमात्मा आत्मा भेद, कर सके न ये जीवात्मा।
आत्मबोध की प्राप्ति, अवबोधन जब आत्मा।।

(12)

जीवन नहीं मरण नहीं, आत्मा है अविनाशी।
क्षणभंगुर व नाशवान है, मनुज की देह विनाशी।।
मनुज की देह विनाशी, फँसी समय के जाल।
नित्य धर्म व शाश्वत गुण, बिसरा स्मृति भाल।।
अनिवार्य अंग है जीव का, चिर कर्म का उद्दीपन।
कर्ममय जीव संरचना, पुरुषार्थ प्रधान जीवन।।

(13)

कृष्णभक्ति एक अन्तर्क्रान्ति, चरमसिद्धि की दाता।
शुद्धि में जो चित्त रमाता, परमानन्द पा जाता।।
परमानन्द पा जाता, वो कृष्णमय हो जाता।
विस्मृत करके अहंभाव को, कृष्णचरण रम जाता।।
दिव्य शक्तियों का केन्द्र है, सत् चित् कृष्ण शक्ति।
कृष्ण में विश्व की श्रद्धा, सांगोपांग कृष्णभक्ति।।

(14)

सूर्यदेव को प्रथम सुनाया, गीता योग का ज्ञान।
मनु से इक्ष्वाकु निवेदित, श्री गीता विज्ञान।।
श्री गीता विज्ञान, वक्तामुख श्रोता ने जाना।
कालान्तर में लुप्त हो गया, गीतामृत का खजाना।।
पुनः गीता अर्जुन के भाग, कृष्ण आराध्य देव।
कुरुक्षेत्र की भूमि साक्षी, नभ से देखें सूर्यदेव।।

(15)

गुरु परम्परा के पात्र करें, योग पद्धति की गणना।
युग परिवर्तन की साक्षी है, सूर्य गति की कलना।।
सूर्य गति की कलना, है जगत उत्पत्ति आधार।
सूर्य रहित रंग कल्पना, निष्क्रिय निराधार।।
खण्डित प्राक् परम्परा, नव उपक्रम है यदि लघु।
गीता ज्ञान के अर्जुन ही, प्रामाणिक मान्य गुरु।।

(16)

भगवद्भक्ति के निमित्त, भगवद्गीता की रचना।
ज्ञानी ध्यानी भक्त से, अध्यात्मवाद की गणना।।
अध्यात्मवाद की गणना, मनुष्य ईश सम्बन्ध।
सम्बन्ध भक्ति की पूर्णता, स्मृत चिर अनुबंध।।
भक्ति से जागृत होती, दिव्य आन्तरिक शक्ति।
सर्वोच्च जगत आनन्द, भक्त व भगवद्भक्ति।।

(17)

परमात्मा का व्यक्तित्व, सामान्य समझ के बाहर।
देवता भी असफल रहे, ईश्वर माया महासागर।।
ईश्वर माया महासागर, भक्ति भाव से पार उतारे।
विनम्र हो स्मरण करे, भक्त परमेश्वर के सहारे।।
निर्लिप्त सतोगुण भाव से, विमुक्त देह से आत्मा।
विषय वासना से दूर रहे, रक्षक जब परमात्मा।।

(18)

प्रकृति व्याख्या मिथ्या नहीं, अस्थाई है संभावना।
शाश्वत स्वरूप परमात्मा, शाश्वत कर्म न भावना।।
शाश्वत कर्म न भावना, यथा कर्म तथा फल पावे।
कर्मफल परिवर्तित होवे, मुक्ति मार्ग दिखलावे।।
ईश्वरीय चेतना से सम्भव, इस प्रकृति में विकृति।
ब्रह्म विकृति असम्भव है, चैतन्य ब्रह्म प्रकृति।।

(19)

परमात्मा नहीं विद्यमान है, इन्द्रियजन्य अज्ञान।
अन्तर में है परम आत्मा, जीव को नहीं ये भान।।
जीव को नहीं ये भान, बाह्य आवरण का प्रदर्शन।
आत्मा को जब जाना, ऊर्जा का अनन्त अर्जन।।
ईर्ष्या द्वेष को भूलकर, सत् अनुभूति करे आत्मा।
काल ही सर्वव्यापक, सर्वज्ञ है परमात्मा।।

(20)

मरा हुआ जिसे जानिए, वह है मात्र शरीर।
अजर अमर का गुण लिए, आत्मा है अशरीर।।
आत्मा है अशरीर, कभी न मरे और मारे।
जीवात्मा चिर नित्य है, शरीर ही मरे व मारे।।
आध्यात्मिकता का अभाव, जन्मे रोग मोह जरा।
अज्ञान का तमस् मिटा, आत्मज्ञानी कब मरा?।

(21)

अर्क दिखे या न दिखे, है ओज विद्यमान।
देह अचेतन आवास है, आत्मा चैतन्य जान।।
आत्माचैतन्य जान, जीव प्राणी विस्मरणशील।
जीव चेतना से भिन्न, चेतना नहीं विस्मरणशील।।
अदृश्य रूप से वास अर्क का, परम तीर्थ कोणार्क।
अद्भुत आध्यात्मिक सम्बन्ध, जगन्नाथ व अर्क।।

(22)

सेवा ही कर्म है शाश्वत, सेवा ही धर्म विधान।
राज नेता या मतदाता, सेवा ही मुक्ति विधान।।
सेवा ही मुक्ति विधान, भगवतगीता का विज्ञान।
दार्शनिक दृष्टिकोण यह, यही अलौकिक ज्ञान।।
सुश्रूषा के आशीष संग, सुख का करो कलेवा।
सेवा जीव चिरसहचर, सनातन धर्म है सेवा।।

(23)

सर्वोच्च आनन्द हैं श्रीकृष्ण, चिर आनन्द आगार।
आनन्द की खोज में जीव, तृष्णा बढ़े अपार।।
तृष्णा बढ़े अपार, इत-उत चित्त भटकता जाए।
अधिक पाने की चाह में, असन्तुष्ट मन घबराए।।
जीव चैतन्य से पूर्ण, भूल गए विचार सर्वोच्च।
कृष्णसंगति से मिलता, परम आनन्द सर्वोच्च।।

(24)

भौतिक आकाश समक्ष है, सर्वत्र लौकिक प्रकाश।
कृष्ण लोक ब्रह्म धाम है, आध्यात्मिक है आकाश।।
आध्यात्मिक है आकाश, तेजमय किरणों वाला।
चिन्मय लोक हरि लोक, है ओज आनन्द निराला।।
जन्म मरण व जरा रोग, परिस्थितियाँ हैं लौकिक।
ब्रह्मलोक पाने की चाह, छोड़ो आनन्द भौतिक।।

(25)

पादप यह भौतिक जगत, जलाशयी प्रतिमाएँ।
जलप्रतिबिम्ब उल्टा दिखे, अधोमुखी शाखाएँ।।
अधोमुखी शाखाएँ, हैं भौतिक जगत अज्ञान।
उर्ध्वमुखी शाखाएँ ही, सार अध्यात्म का ज्ञान।।
मनुज दिग्भ्रमित घूम रहा, इच्छाओं के आतप।
प्रतिबिम्ब में उलझा रहा, त्याग न पाया पादप।।

(26)

आत्म बोध की अनुभूति ही, प्रथम अवस्था मोक्ष।
शरीर नहीं एक आत्मा, प्रत्यक्ष हो या परोक्ष।।
प्रत्यक्ष हो या परोक्ष, बनो उपासक निरासक्त।
आध्यात्मिकता सुगम नहीं, भौतिकजग आसक्त।।
उपाधि उच्च पद लालसा, उन्नति में अवरोध।
निरभिमान हो प्राप्त करे, साक्षात् आत्मबोध।।

(27)

शरीर सच्चिदानन्द नहीं, न शाश्वत अविनाशी।
भगवद्धाम का ज्ञान नहीं, अज्ञानी और विनाशी।।
अज्ञानी और विनाशी, दुःख का स्वयं है कारण।
भौतिक जगत में उलझा रहे, बेवजह अकारण।।
आनन्द से ओतप्रोत नहीं, निरानन्द जो अधीर।
सुख सत् चित् परिणाम है, दुःख उत्पन्न शरीर।।

(28)

भगवान का ध्यान ऐसा करो, प्रेमीयुगल की बान।
कार्यरत रहकर आसक्ति, हो चौबीस घण्टे ध्यान।।
हो चौबीस घण्टे ध्यान, संलग्न ध्यान गृहकार्य।
प्रगाढ़ प्रेम की सद्भावना, गुँथी प्रत्येक लघुकार्य।।
वृत्ति त्याग किए बिना, जैसे धर्मरत श्रीमान।
जीवन संघर्ष करते हुए, स्मरण करें भगवान।।

(29)

गीता के अनुसार रहें, पञ्चेन्द्रियाँ ब्रह्म में लीन।
विषय वासना में लिप्त रहे, इन्द्रिय निग्रह से हीन।।
इन्द्रिय निग्रह से हीन, उन्नति अवनति न पहचाने।
संयमित मन से कर्मरत, परमेश्वर की सत्ता जाने।।
आध्यात्मिक विज्ञान है, श्री भगवद्कथा पुनीता।
अधर्म पर धर्म की विजय, कृष्णामृत है गीता।।

(30)

पवित्रगंगा का अवतरण, श्री चरणों से उद्धृत।
भगवद्गीता का गंगामृत, परमात्मा मुख से श्रुत।।
परमात्मा मुख से श्रुत, पार्थ को भान धर्म का।
आत्मसमर्पण से जाना, भेद सत्य असत्य का।।
भव सागर से मुक्ति, श्रवण जब कृष्ण चरित्र।
भगवद्गीता का गंगाजल, मन व हृदय पवित्र।।

(31)

जिनके साथ जनार्दन, उनकी विजय अटल।
जान चुके धृतराष्ट्र थे, आशंकित हृदयपटल।।
आशंकित हृदयपटल, पराजय का भय गहरा।
अग्निदेव प्रदत्त रथ पर, हनुमत सूर्य का पहरा।।
मधुसूदन का शंखनाद, धर्म विजय संग उनके।
लक्ष्मी वर लेती उनको, कृष्ण हृदय में जिनके।।

(32)

आध्यात्मिक दृष्टि से वंचित, धृतराष्ट्र नेत्रहीन।
दुर्भाग्य लेकर जन्मे थे, सौ पुत्र धर्म विहीन।।
सौ पुत्र धर्म विहीन, दुराचारी कुनीति के कामी।
कूटनीति से राज्य लूटा, पाण्डव अरण्यगामी।।
भौतिक सुख की इच्छा, मूल्य खो गए आत्मिक।
प्रपंच से विमुख हुई, उन्नति भी आध्यात्मिक।।

(33)

हृषीकेश या कहो गोविन्द, चाहे देवकीनन्दन।
वृन्दावन में लीला करते, कृष्ण यशोदानन्दन।।
कृष्ण यशोदानन्दन, वीर बलभद्र के ये अनुज।
वसुदेव सुत हैं वासुदेव, अवतरित नाश दनुज।।
भक्त पुकारे दौड़े आते, धरिणी पर गुडाकेश।
पृथापुत्र के रथी बनते, पार्थसारथी हृषीकेश।।

(34)

मात्र आज्ञादाता नहीं, आज्ञापालक हैं भगवान।
कुरुक्षेत्र के धर्मयुद्ध में, सेवा में नहीं अभिमान।।
सेवा में नहीं अभिमान, आनन्दित हो मुस्काते।
भक्त सेवा धर्म मानकर, आज्ञाकारी बन जाते।।
दिव्य योग से कृष्णार्जुन, थे मित्रता के सुपात्र।
अक्षुण्ण ईश्वर की सत्ता, भगवन मनुरूप मात्र।।

(35)

निद्रा अज्ञान की द्योतक, गुडाकेश हर लीजिए।
अज्ञान का तम सताए, कोई अमिट वर दीजिए।।
कोई अमिट वर दीजिए, नाथ करुणा के सागर।
दिव्यता से भर सकूँ, अलौकिक ज्ञान की गागर।।
अमर जैसे ऋषि सपत्नी, अगस्त्य व लोपामुद्रा।
ज्ञान सन्यास का व्रत लिया, त्यागी चिरनिद्रा।।

(36)

ज्वलन्तमाया से आकर्षित, ईशभक्त तो है नहीं।
समय व्यर्थ गँवा रहा, भौतिकता से विलग नहीं।।
भौतिकता से विलग नहीं, सद्गति कभी न पावे।
जन्म मृत्यु के चक्र फँसा, बन्धन से छूट न पावे।।
मैं-मेरा में उलझ के रह गई, माटी की यह काया।
क्षणभंगुर सुख धी भरमाए, बैरी ज्वलन्तमाया।।

(37)

इन्द्रियाँ जब नहीं संयमित, मुक्ति मिले न शक्ति।
आध्यात्मिक गुरु की प्राप्ति, सन्यास व विरक्ति।।
सन्यास व विरक्ति, इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण।
बिना ज्ञान और भक्ति, भव बंधन को आमन्त्रण।।
संयमित होकर कार्य करें, पाँचों ज्यों ज्ञानेन्द्रियाँ।
सुख दु:ख में सम भाव रहें, तटस्थ रहें इन्द्रियाँ।।

(38)

प्रामाणिक गुरु सामीप्य हो, अधिक यदि दरकार।
वैदिक वाङ्मय का उपदेश, गुरु लगाता पार।।
गुरु लगाता पार, दावाग्नि की भभक बुझाता।
जीवन में अनचाही आई, हर उलझन सुलझाता।।
कूकर सूकर समझे कहाँ, विज्ञान यह पौराणिक।
भौतिक कष्टों का निदान, गुरु होता प्रामाणिक।।

(39)

मानव जीवन निधि बहुमूल्य, जीव करे उपयोग।
देहात्मबुद्धि वश आसक्त है, कृपण के लिए रोग।।
कृपण के लिए रोग, असाध्य जब बन जाता है।
अनुराग महत्वाकांक्षा में, जीवन व्यर्थ गँवाता है।।
मूर्ख संसारी का मत जैसे, मति हीन हो दानव।
बुद्धिमत्ता की अवस्था, विषय नियन्त्रित मानव।।

(40)

पुण्यकर्म की समाप्ति, अधःपतन का कारण।
आर्थिक विकास विनाश, कर्म फल के कारण।।
कर्मफल के कारण, अति सुख शिखर मिला।
कर्मफल के कारण, अति दुःख पतन मिला।।
जन्म जरा रोग मरण का, हल नहीं अर्थ व कर्म।
समरसता का योगमार्ग, जब संचित पुण्यकर्म।।

(41)

जीव व्यष्टि एक आत्मा, स्वरूप बदलता जाता।
बालक कभी युवा कभी, वृद्ध पुरुष बन जाता।।
वृद्ध पुरुष बन जाता, फिर भी आत्मा रहे समान।
देह-देह बदल विचरता, आत्मा की यह बान।।
एक आत्मा एक देह है, हनुमत एक चिरंजीव।
आध्यात्मिक ज्ञान जिसे हो, चिरजीवी वह जीव।।

(42)

महाभारत कथा एक प्रशिक्षण, गीता का है ज्ञान।
कर्म का है फल भोगता, प्रतिपल हर इनसान।।
प्रतिपल हर इंसान, संग्राम रत रहे अवांछित।
निष्क्रिय चाहे कर्मी, नियति के खेल नियोजित।।
सद्भावना से ओतप्रोत है, देश मेरा यह भारत।
घर घर से समाप्त हो, परिवारिक महाभारत।।

(43)

नित्य चिन्मय आकाश है, प्रत्येक पदार्थ नि:सार।
भौतिक संसार के पार दिखे, एक दूजा ही संसार।।
एक दूजा ही संसार, प्रकृति और जीव सनातन।
ईश्वर व ब्रह्म धाम सनातन, शाश्वत धर्म सनातन।।
धर्म-कर्म तो होवे निश्चित, लक्ष्य भी अनित्य।
आत्मा परमात्मा की साक्षी, परमशक्ति है नित्य।।

(44)

जीवन को शुद्ध बनाइए, तम रज से अति दूर।
निश्छल आचार विचार रहे, सत् होवे भरपूर।।
सत् होवे भरपूर यहाँ, आहार मन्त्र व सत्मर्यादा।
सात्विक भोज खाएँ, सात्विक भाव हो ज्यादा।।
कामी जीव अतृप्त रहे, आत्मा भटके तन तन।
भवबन्धन के पार रहे, यदि हो सात्विकजीवन।।

(45)

गीता है एक महाकाव्य, सनातन ग्रन्थ महान।
दार्शनिक संस्कृत काव्य में, कलियुग का बखान।।
कलियुग का बखान, महत्वाकांक्षा की है लड़ाई।
धृतराष्ट्र पुत्र निज मुख करें, अपनी स्वयं बड़ाई।।
अधर्म पर तुषारापात से, कौरवों का अंतस् रीता।
पार्थ शून्य बन शिक्षा लेते, श्रीकृष्ण कहते गीता।।

(46)

जन्म और मृत्यु है निश्चित, पुनर्जन्म शाश्वत विधान।
जन्म मरण का चक्र चले, मुक्ति मोक्ष विधान।।
मुक्ति मोक्ष विधान, कथित हत्या युद्ध अकार्य।
समाज व्यवस्था के लिए, हिंसा व युद्ध अपरिहार्य।।
युद्ध क्षत्रिय का धर्म है, कर्तव्य पालन करो आजन्म।
अनुचित पथ पर गमन, व्यर्थ है लक्ष्य जन्म।।

(47)

जीव जनम से अव्यक्त है, मध्य अवस्था व्यक्त।
वेदान्तवाद का यह तर्क, है मृत्यु काल अव्यक्त।।
है मृत्यु काल अव्यक्त, भेद सदा रहा अचिन्त्य।
असम्भव मनुज कल्पना, सूक्ष्मकण महत्व अनिन्द्य।।
स्थूल भौतिक ज्ञान है, कारण माया मुग्ध जीव।
आत्मज्ञान के अभाव में, दुष्परिणाम भोगे जीव।।

(48)

लौकिक प्रगति सब झूठवाद, मानव को नहीं ज्ञान।
धन सम्पति सब नाशवान है, इतना भी नहीं भान।।
इतना भी नहीं भान, फँसा अगणित जन्मान्तर।
लौकिक पारलौकिक सुख में, कर न पाए अन्तर।।
इन्द्रियों का दास बना है, लक्ष्य जीव का भौतिक।
सिद्धि की यदि कामना, त्यागें उन्नति लौकिक।।

(49)

युद्ध में यदि मृत्यु मिले, परमगति व्यवहार।
विजय प्राप्त यदि युद्ध में, धरा राज्य विस्तार।।
धरा राज्य विस्तार, सुकार्य कृष्ण के निमित्त।
भौतिक कार्य बन्धन नहीं, रहो निज धर्म प्रवृत्त।।
सतोगुण की वृद्धि जैसे, स्वभाव तथागत बुद्ध।
रजोगुण में लिप्त यदि, इन्द्रियतृप्त कर्म से युद्ध।।

(50)

कलुषित चित्त की शुद्धता, गीता का उपदेश।
कर्म समय पर कीजिए, परमेश्वर का संदेश।।
परमेश्वर का संदेश, जिएँ निजकर्म शुद्ध कर।
शुद्धकर्म ही भक्ति पथ,चलें नैतिक मार्ग पर।।
मुक्ति नहीं वो संभव, जो भौतिक चेतना पोषित।
कुकर्म में डूबा रहता, मानव हृदय कलुषित।।

(51)

अलौकिक चरित्र में श्रद्धा, कृष्ण कृपा का भाव।
शुभ अशुभ कर्म फल का, निष्काम सुगम प्रभाव।।
निष्काम सुगम प्रभाव, आध्यात्मिकता से मिले।
अच्छे बुरे का द्वैत नहीं, देह बुद्धि का ज्ञान मिले।।
सर्वोच्च सिद्धि कृष्णमय, कृष्णदृष्टि पारलौकिक।
कृष्णभाव की वृद्धि से, आत्मबोध अलौकिक।।

(52)

अल्पज्ञानी का विश्वास है, यज्ञाहुति स्वर्ग का द्वार।
इन्द्रिय तृप्ति ही प्रमुख, आसक्ति बारम्बार।।
आसक्ति बारम्बार, सकाम कर्म मन बहकाए।
स्वर्गीय आनन्द के लिए, अज्ञान में फँस जाए।।
भवबन्धन के पार नहीं, मायापति ज्ञानी विज्ञानी।
विषय भोग के जाल में, विषयी अल्पज्ञानी।।

(53)

फल आसक्ति रहित रहो, कर्म रूप यह युद्ध।
युद्ध विमुखता भी आसक्ति, कर्म ही करे प्रबुद्ध।।
कर्म ही करे प्रबुद्ध, मुक्ति पथ का अधिकारी।
निरासक्ति अपनाकर छूटे, बन्धन से अविकारी।।
कल्याणकारी कर्तव्य करके, जीवन बने सफल।
सतोगुण से नित्यकर्म, आसक्तिहीन सत् फल।।

(54)

जीत हार को त्यागकर, सम भाव से कर्म हो।
योग की स्थिति में रहकर, कर्ममय ही धर्म हो।।
कर्ममय ही धर्म हो, इन्द्रिय निग्रह कर सकें।
परमतत्व ईश्वर का निर्णय, निर्द्वन्द्व पूर्ण कर सकें।।
ब्रह्मधाम को पाना है तो, विषयों को लो जीत।
निष्क्रिय रहकर न रहो, निश्चित धर्म की जीत।।

(55)

परमात्मा के दास बनकर, निज स्वरूप को जानो।
कृष्ण भक्ति ही एक मार्ग है, स्वीकृत पथ पहचानो।।
स्वीकृत पथ पहचानो, गर्हित अन्य सारे कर्म।
अर्जित कर लो अपनी शक्ति, कृष्ण का जानो मर्म।।
परम धाम में आश्रय पाओ, मोक्ष प्राप्त जीवात्मा।
जीवन मृत्यु के पार है, धाम एक परमात्मा।।

(56)

अज्ञानतावश जो न समझे, भौतिक जगत का दुःख।
पद पद पर संकट मिलते, मिले न स्थाई सुख।।
मिले न स्थाई सुख, मानव स्थिति को सहता।
भवसागर के बन्धन में, वो गिर गिर फँसता।।
ज्ञात रहे कठिन डगर है, कष्ट दिलाती भौतिकता।
मूरख को वैकुण्ठ न भाए, कारण है अज्ञानता।।

(57)

पूर्ण समाधि में ब्रह्मप्राप्ति, है भक्ति की शक्ति।
आत्मबोध का सर्वोच्च शिखर, कृष्ण में आसक्ति।।
कृष्ण में आसक्ति, मानव कृष्ण का शाश्वत दास।
स्वर्गप्राप्ति का लक्ष्य नहीं, न वेदालंकार की आस।।
कृष्ण का सानिध्य होवे, दिव्य स्थिति परिपूर्ण।
ज्ञान प्राप्ति यदि निश्चित,उद्देश्य होवे पूर्ण।।

(58)

विशेष स्थिति के अनुसार, हो व्यक्ति की पहचान।
अपने गुणों से जाने जाते, ज्ञानी ऋषि विद्वान।।
ज्ञानी ऋषि विद्वान, पूर्ण चैतन्य के आगार।
छलके चंचलता मूरख की, वाणी ही आधार।।
एक मात्र ही कर्म में, कृष्ण भक्ति अवशेष।
दिव्य शक्तियों के स्वामी के, लक्षण बड़े विशेष।।

(59)

क्रत्रिम साधना का बन्धन, विषयों पर बेअसर।
निश्छल कृष्ण भक्ति का, मन भाव पर असर।।
मन भाव पर असर, इन्द्रियाँ शून्य में समाएँ।
ईश्वर का सेवक बनकर, विषय में मन न रमाएँ।।
महर्षियों से सद्गुण होते, आदर्श रखता अप्रतिम।
न भौतिकता सर्वस्व हो, न आत्मोत्सर्ग क्रत्रिम।।

(60)

कृष्ण भक्त अपने सुख का, परमेश्वर को दे श्रेय।
बन अयोग्य करबद्ध रहे, ईश्वर को माने प्रेय।।
ईश्वर को माने प्रेय, सुखद अनुभूति में जीता।
रागविराग से निष्प्रभावित, कृष्ण भाव की गीता।।
अर्पित करता जीवन अपना, अंग अंग में कृष्ण।
सेवा में परिलक्षित होते, परमेश्वर श्री कृष्ण।।

(61)

अग्नि प्रकाश ऊष्मा हीन है, तो रहे अर्थ अभाव।
चिर सहचर संग जीव रहे, वही शाश्वत स्वभाव।।
वही शाश्वत स्वभाव, वही है मानव की पहचान।
धर्मकर्म का भोग करता, आसीन सर्वोच्च मचान।।
जीव स्वरूप की जिज्ञासा, स्वाभाविक ज्यों वह्नि।
शाश्वतधर्म की धारणा, ब्रह्मांड में जलती अग्नि।।

(62)

कछुआ एक उदाहरण, खोल में बैठा अंग समेट।
वैसे ही जो चैतन्य रहे, इन्द्रियों को ले समेट।।
इन्द्रियों को ले समेट, ईश्वर सेवा का कार्य करे।
आत्म तुष्टि से दूर रहे, भगवान में ध्यान धरे।।
विषय वासना मुक्त, चेतना में मन स्थिर हुआ।
कामनिग्रह का उपदेशक, एक छोटा सा कछुआ।।

(63)

भौतिक वस्तुओं से अरुचि, कृष्ण भक्त का ज्ञान।
अल्पज्ञ पर प्रतिबन्ध लगे, जड़ चेतन का विज्ञान।।
जड़ चेतन का विज्ञान, कृष्ण सौंदर्य का लो स्वाद।
कृष्ण भावना के पथ पर, प्रगति चरम आह्लाद।।
स्वत: अरुचि जब जाग्रत, नश्वर संसार लौकिक।
अष्टांग योग सी संस्तुति, विरत भोग भौतिक।।

(64)

प्रज्ज्वलित अग्नि से जले, निकट का हर पदार्थ।
योगी हृदय से काम मिटाए, कृष्ण स्वरूप यथार्थ।।
कृष्ण स्वरूप यथार्थ, उपजे इन्द्रिय मन विराग।
परमधाम का वास मिले, नियन्त्रण मन अनुराग।।
मृगमरीचिका की खोज में, कामी क्षुधा है प्रचलित।
मन हृदय में एक लौ जले, भक्ति से प्रज्ज्वलित।।

(65)

इन्द्रिय चिन्तन से उत्पन्न, आसक्ति महाविनाशक।
आसक्ति से काम उपजा, काम से क्रोध प्रशासक।।
काम से क्रोध प्रशासक, भौतिक विषयों का आदी।
क्रोध से सम्मोहन जन्मा, स्मृति की बरबादी।।
स्मृति भ्रंश से मति गई, नाश अधीन जब इन्द्रिय।
भव कूप में न गिर सकें, विरले नर जितेन्द्रिय।।

(66)

आत्मसंयमी का जागरण, भौतिकतावादी सोए।
रात्रि भोगी की, योगी तो, चिन्तन के बीज बोए।।
चिन्तन के बीज बोए, भक्ति की धरा उर्वरक।
आध्यात्मिक अनुशीलन की, फसल सफल प्रवर्तक।।
इन्द्रिय सुख का स्वप्न देखता, विषयी भोगी कामी।
आत्मनिरीक्षक सदा रहे, समभाव आत्मसंयमी।।

(67)

सागर नहीं कभी विचलित, सब नदियों का प्रवेश।
अपने में परिपूर्ण रहे, स्थिर चरित्र विशेष।।
स्थिर चरित्र विशेष, परिवार का जैसे मुखिया।
इच्छाओं की नदियाँ, ज्यों काम पिपासु दुखिया।।
स्थिरता में जो रहता, वह भरता शान्ति की गागर।
कृष्णभक्त निष्काम रहें, शान्त हों जैसे सागर।।

(68)

इन्द्रियतृप्ति की प्रमुखता, भौतिक जगत प्रधान।
आध्यात्मिक जगत में जा पाते, कृष्ण भक्त महान।।
कृष्ण भक्त महान, दिव्य प्रेम की गंग बहाए।
ब्रह्मप्राप्ति तत्काल हो, ब्रह्ममोक्ष निर्वाण कहाए।।
भगवद्धाम भी प्राप्त हो, जब कृष्ण में आसक्ति।
जीवन मृत्यु में फँसा रहे, चाहे जो इन्द्रियतृप्ति।।

(69)

आत्मसाक्षात्कार के इच्छुक, करते दो ही प्रयोग।
ज्ञानयोग व भक्तिमय सेवा, बन्धनमुक्ति अभियोग।।
बन्धनमुक्ति अभियोग, अन्तिम लक्ष्य है श्रीकृष्ण।
शुद्धि की प्रक्रिया यही, यही एकात्म भाव कृष्ण।।
बुद्धि योग ब्रह्माश्रित, ब्रह्म तो शाश्वत निराकार।
कृष्ण ही ब्रह्मरूप, वैराग्य से आत्मसाक्षात्कार।।

(70)

मिथ्याचारी जीव लोक में, इन्द्रिय तृप्ति लक्ष्य।
विषयचिन्तन में उलझा रहा, अबोध शिष्य हैं भक्ष्य।।
अबोध शिष्य हैं भक्ष्य, धूर्त बन व्यर्थ ज्ञान ही देते।
पापी पुरुष के कर्म फल, भगवान स्वयं हर लेते।।
भोगी योगी रूप में रहे, अशुद्ध चित्त व्यभिचारी।
यौगिक बल से दूर रहें, त्यागें धूर्त मिथ्याचारी।।

(71)

सारे अंग ज्यों सेवक बनकर, काया की करते सेवा।
समस्त देव भी निमित्त बन, कृष्ण की करते सेवा।।
कृष्ण की करते सेवा, देवता श्री कृष्ण के अंग।
इन्द्र चन्द्र वरुण भी, भगवान नियुक्त प्रत्यंग।।
कृष्ण अर्पित भोज से ज्यों, नष्ट हों पाप फल सारे।
भोक्ता की स्तुति करके, पाप निरापद सारे।।

(72)

महापुरुष का अनुसरण, सांसारिक जीव करे।
आत्मबोध और उन्नति, साधक साध्य करे।।
साधक साध्य करे, श्रीमद्भागवत् की पुष्टि।
आदर्श नियमों का पालन, अभ्यास और संतुष्टि।।
नियमों पर है आधारित, शास्त्रोक्त आज्ञा युगपुरुष।
अबोध जन के नायक, अनुसरणीय महापुरुष।।

(73)

स्वाभाविक सा यह प्रश्न है, अर्जुन के मन का भ्रम।
जीव परमात्मा का अंश है, विशुद्ध भक्त परम।।
विशुद्ध भक्त परम, माया के संसर्ग में आता।
इच्छा विरुद्ध होकर, पाप कर्म कर जाता।।
परमात्मा से प्रेरित है, प्रकृति जब सारी दैहिक।
बलपूर्वक क्यों होती, ये बाध्यता स्वाभाविक?।

(74)

रजोगुण उत्पन्न भौतिकता, रचती काम का रूप।
जीवात्मा गुण संसर्ग से, असन्तुष्टि क्रोध स्वरूप।।
असन्तुष्टि क्रोध स्वरूप, मोह उत्पत्ति का कारण।
मोह बढ़ता ही रहे, धर्म अधर्म में फँसा अकारण।।
काम ही है वह शत्रु, क्रोध उत्पत्ति बढ़ाए अवगुण।
आध्यात्मिक शक्ति से, रहे नियन्त्रित रजोगुण।।

(75)

धुआँ अग्नि का परिचायक, धूमिल चेतना सूचक।
दर्पण धूल उदाहरण, आत्म स्वच्छता सूचक।।
आत्म स्वच्छता सूचक, आध्यात्मिक शुद्ध प्रक्रिया।
भगवान नाम संकीर्तन, भक्ति ही श्रेष्ठ क्रिया।।
गर्भ से शिशु सम्बन्ध है, गर्भाशय गहरा कुआँ।
अग्नि की संकल्पना, प्रतीक उर्ध्वगामी धुआँ।।

(76)

पञ्च पाण्डव सत्यधर्मी, वरदहस्त दैवीय शक्ति।
कौरवदल ने न पहचाना, कृष्ण की शक्ति भक्ति।।
कृष्ण की शक्ति भक्ति, भूला मद में जब दुर्योधन।
मातुल शकुनि की चाल पर, गलत राह अवबोधन।।
चतुरंगिणी सेना के चयन में, दुर्योधन का प्रपञ्च।
श्रीकृष्ण चयन से निहाल, हुए पाण्डु सुत पञ्च।।

(77)

कृष्ण पार्थ के सारथी, रथ रण केन्द्र की ओर।
अधर्म पर धर्म विजय, कृष्ण भाव की भोर।।
कृष्ण भाव की भोर, रण में संशय में थे पार्थ।
बन्धु बान्धव समक्ष खड़े, कम्पित मुख शब्दार्थ।।
असहाय स्थिति अर्जुन की, अंधेरा छाया कृष्ण।
धर्म का मर्म गहन समझाते, युद्ध क्षेत्र में कृष्ण।।

(78)

अधर्म की जब प्रधानता, धर्म का होता लोप।
भगवान ने अवतार लिया, जब जब नियम विलोप।।
जब जब नियम विलोप, वैदिक नियम स्थापना।
जीव को दी शरणागति, दुष्टों का टूटा सपना।।
हिरण्यकश्यप कंस जैसे, संहारक लिप्त कुकर्म।
प्रह्लाद और देवकी के, रक्षक से मिटा अधर्म।।

(79)

जीव के हृदय में स्थित, परमात्मा है अनन्त।
समस्त जीवों का वही, आदि मध्य और अन्त।।
आदि मध्य और अन्त, विष्णु सूर्य मरीचि व चन्द्र।
वही सामवेद व इन्द्र, इन्द्रियों में मन जीवनतन्त्र।।
वही शिव कुबेर है, बृहस्पति कार्तिकेय सजीव।
वही ऊँकार पवित्र है, वही कामदेव सजीव।।

(80)

विराट रूप भगवान का, अर्जुन सौभाग्यवान।
अकल्पनीय कृपा याचना, कृष्ण श्री भगवान।।
कृष्ण श्री भगवान, पार्थ को दिव्य चक्षु का दान।
विश्वरूप के तेज का, सहस्त्र भाग त्रिलोक महान।।
अनेक जीव व देव हैं, काया अनन्त अंग की लाट।
गदा चक्र विभूषित, तेजस्वी रूप विराट।।

(81)

श्रीकृष्ण उपदेश को जानिए, भक्तियोग एक मार्ग।
वेदाध्ययन न तपस्या ही, न पूजा प्रशस्त मार्ग।।
न पूजा प्रशस्त मार्ग, कठिन चतुर्भुज रूप दर्शन।
अनन्य भक्ति के बिना, असफल वैदिक ज्ञानार्जन।।
नहीं मिलें मन्दिर में, औपचारिक पूजा से कृष्ण।
भक्ति मार्ग एक रास्ता, साक्षात् दर्शन श्रीकृष्ण।।

(82)

नित्य शाश्वत और अजन्मा, श्री कृष्ण ही नाम।
विष्णु का अवतार सातवाँ, गोकुल जिनका धाम।।
गोकुल जिनका धाम, अवतरित नाना अवतार।
संयुक्त संगति परमेश्वर से, जीवन मृत्यु के पार।।
जीवन की सार्थकता है, कर्म करो ज्यों भृत्य।
दिव्य सनातनधाम मिले, चिरंतन शान्ति नित्य।।

(83)

अध्यात्म और परमेश्वर में, गहन योग सम्बद्ध।
अचिन्त्य अव्यक्त स्वरूप भी, ज्ञान योग संग बद्ध।।
ज्ञान योग संग बद्ध, निरंजन सुपथ का अनुगामी।
कृष्ण भाव परिपूर्ण है, भक्ति पथ अनुगामी।।
दक्षता भी अपरिचित है, दुर्लभ ज्ञान आत्म अनात्म।
है योग भक्ति परिपूर्ण, भगवत्सेवा ही अध्यात्म।।

(84)

सागर में डूबे असहाय को, मछुआरा कर दे पार।
भवसिन्धु में डूबे भक्त को, भगवान लेते उबार।।
भगवान लेते उबार, भगवान स्वयं उद्धारक।
अष्टांगयोग नहीं जरूरी, कृष्ण कारण व कारक।।
अनुग्रहवश शीघ्र आ जाते, गरुडसवार राधानागर।
कृष्ण नाम सुमिरन, डूब लो भक्ति के सागर।।

(85)

भगवान को अति प्रिय है, भक्ति ज्ञानरत योगी।
दूषित संगति से मुक्त रहे, सन्तुष्ट कर्म नियोगी।।
सन्तुष्ट कर्म नियोगी, मित्र व शत्रु एक समान।
यश अपयश भी समभाव, सुख दुख मान अपमान।।
स्थिरप्रज्ञ हर परिस्थिति, कृष्ण भक्त अति गुणवान।
उसकी सुध स्वयं ही लेते, परमेश्वर श्री भगवान।।

(86)

योगी का कर्तव्य यही हो, इच्छा क्रोध नियन्त्रित।
इन्द्रियों का वेग नियन्त्रित, जीवन हो आनन्दित।।
जीवन हो आनन्दित, कर लो वशीकरण अभ्यास।
अपूर्ण इच्छा भौतिक, होवे काम क्रोध आभास।।
रोक न पाए आजीवन, वाणी मनोवेग को भोगी।
वश कर लेता वैराग्य से, भौतिक वेग को योगी।।

(87)

शरीर की अति आवश्यकता, योग प्रगति अवरूद्ध।
कृष्णभावनामृत भोज न हो, जो यम नियम विरुद्ध।।
जो यम नियम विरुद्ध, तमोगुणी प्रवृत्ति कहाए।
भोजन निद्रा में रमता, श्रीकृष्ण कृपा न पाए।।
कार्य सदैव हो नियमित, आचार धीर गम्भीर।
इन्द्रियतृप्ति की क्षुधा, अधोगति अजीर्ण शरीर।।

(88)

काया भौतिक एक रथ है, व्यक्ति सुख आसीन।
बुद्धि है रथ का सारथी, हृदय लगाम महीन।।
हृदय लगाम महीन, नियन्त्रित गति दिशा सारी।
इन्द्रियों के अश्व दौड़ें, पर बुद्धि हृदय से हारी।।
वशीकरण एक मन्त्र है, प्रबल हृदय की माया।
मन को कृष्ण में रमाएँ, हो आध्यात्मिक काया।।

(89)

चंचल मन वायु समान है, कठिन है वशीकरण।
अभ्यास और वैराग्य से, आत्मा का करे वरण।।
आत्मा का करे वरण, ईश आसक्ति अब आसान।
आध्यात्मिक संतुष्टि है, कृष्ण भक्ति का विधान।।
कृष्ण श्रवण में मन रहे, तन कृष्णधाम के अंचल।
योगोपचार सुपथ्य से, स्थिर हो मन चंचल।।

(90)

संसार से देह प्रयाण का, विषय बड़ा गम्भीर।
मृत्यु ज्ञान के निमित्त, व्यक्ति रहता अधीर।।
व्यक्ति रहता अधीर, समय शुभलक्षण की चिंता।
ब्रह्म चन्द्रलोक की, शुक्ल कृष्णपक्ष की चिंता।।
सूर्योत्तरायण शुक्लपक्ष में, ब्रह्मलोक मिले आगार।
दक्षिणायन कृष्णपक्ष रात्रि, हो पुनर्जन्म संसार।।

(91)

परमेश्वर जब-जब प्रकट हुए, संग अन्तरंगा शक्ति।
कल्मष से न हुए प्रभावित, स्वामी भौतिक शक्ति।।
स्वामी भौतिक शक्ति, देह आध्यात्मिक व नित्य।
ऐश्वर्य ज्ञान परिपूर्ण हैं, चिर बुद्धिमत्ता में संस्तुत्य।।
दिव्य स्वरूप को नकारे, जो उलझा देह नश्वर।
सारी घटित गतिविधियों के, साथी हैं परमेश्वर।।

(92)

जीव देहान्तरण करता हुआ, सदा मिथ्या मुग्ध रहा।
प्रकृति पर प्रभुता के लिए, माया में फँसा रहा।।
माया में फँसा रहा, प्रकृति से बैर मोल लिया।
क्रम सदियों चलता रहा, गुमान में जीता रहा।।
कभी देव कभी मानव, कभी जल जन्तु सजीव।
प्रत्येक योनि में सेवा, प्रकृति स्वामिनी हर जीव।।

(93)

अर्जुन श्रेष्ठ उदाहरण है, ईश्वर विज्ञान श्रवण।
इच्छाओं को त्यागकर, करे भक्ति कृष्णप्रवण।।
करे भक्ति कृष्णप्रवण, हो आध्यात्मिक सुख संगम।
दिव्य चतुर्भुज रूप है, अलौकिक दृश्य विहंगम।।
संवाद पर संवाद करे, मन का भाव चुन चुन।
कृष्ण सुनाते दर्शन गीता, भाग्यवान था अर्जुन।।

(94)

रजोगुण की अधिकता से, बढे लालसा आसक्ति।
विषय वासना प्रखर रहे, अविश्वास कृष्ण भक्ति।।
अविश्वास कृष्ण भक्ति, जन्मे प्रमाद और मोह।
तमोगुणी व्यवस्था में, अभिमान क्रोध और द्रोह।।
ज्ञान कर्म की प्रेरणा, मुक्त अभिव्यक्ति सतोगुण।
सकाम कर्म पहचान है, वृद्धि लक्षण रजोगुण।।

(95)

ब्रह्म लोक या पशु योनि, अपने कर्तव्य का फल।
जीव के धर्म सत्कर्म से, जीवन बने सफल।।
जीवन बने सफल, सतोगुण ब्रह्म लोक का द्वार।
रजोगुणी नर के लिए, सकाम कर्म संसार।।
तमोगुण में जन्म मिला, कर्म से मिला अधमलोक।
महर्षियों का लोक है, शुद्ध उच्चतम ब्रह्म लोक।।

(96)

पापकर्म से यदि मुक्त नहीं, कठिन कृष्ण भक्ति।
भक्त स्वत: निष्पाप होए, शुद्ध भक्ति की शक्ति।।
शुद्ध भक्ति की शक्ति, श्री कृष्ण हैं पापनाशक।
धर्म कर्म मन विजय हो, उर की दुर्बलता घातक।।
सत्य असत्य का ज्ञाता, जितेन्द्रिय सकाम कर्म।
अज्ञानी ने भक्ति त्यागी, रत भौतिक पापकर्म।।

(97)

कृष्ण नहीं सामान्य व्यक्ति, साक्षात् ब्रह्म स्वरूप।
भगवद्गीता का केन्द्रबिन्दु, सर्वोच्च सिद्धि अनूप।।
सर्वोच्च सिद्धि अनूप, गीता ज्ञान धर्म युद्ध।
करबद्ध होकर श्रवण करें, शिष्योत्तम पार्थ प्रबुद्ध।।
नाम रूप गुण लीला, प्रतिक्षण नया रूप श्रीकृष्ण।
दिव्यधाम से अवतरित, गदा चक्रधारी कृष्ण।।

(98)

अर्जुन के सौभाग्य से, दृश्य विराट रूप भगवान।
धर्म विजय के कारण ही, प्रगटे कृष्ण भगवान।।
प्रगटे कृष्ण भगवान, पार्थ को गीता का अभिज्ञान।
रूप तेजोमय अनुभव, अलौकिक दिव्यदृष्टि महान।।
दोनों भाव विभोर हैं, गुरू शिष्य कृष्णार्जुन।
शतशीश के दर्शन कर, नतमस्तक बैठे अर्जुन।।

(99)

अल्पज्ञ का सर्वस्व देह है, देह त्याग सब नष्ट।
अन्तिम समय विलाप करे, आत्मा न कभी विनष्ट।।
आत्मा न कभी विनष्ट, परमात्मा में जीव समाया।
जीवात्मा का रूप समझ, ज्ञानी ने ब्रह्म को पाया।।
आत्मा परमात्मा का, अस्तित्व पहचाने सुप्रज्ञ।
प्रकृति के निर्देश न माने, देहचक्र फँसा अल्पज्ञ।।

(100)

परमेश्वर का ज्ञान जिन्हें, उनके सान्निध्य में वास।
आत्मबोध विज्ञान श्रवण से, सौभाग्य करे निवास।।
सौभाग्य करे निवास, प्रामाणिक गुरू के संग।
श्रद्धा भक्ति से श्रवण, चेतना जागे अंग प्रत्यंग।।
भगवद्धाम के मार्ग पर, अमिट पदचिह्न ईश्वर।
आत्म साक्षात्कार से, बोध सत्ता परमेश्वर।।

----00----

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

नाम- **श्रीमती रंजना राजीव श्रीवास्तव**

जन्मतिथि- २७ अक्टूबर (जन्मस्थान- प्रयागराज)

निवासस्थान- C-११०२ जयन्ती नगरी ५, बेसा, मनीष नगर, नागपुर, महाराष्ट्र- ४४००३४

मो.- ९०९६८०८१९१

ईमेल- srivastavaranjana9@gmail.com

शिक्षा- एम.ए., एल.टी., बी.एड.

भाषाज्ञान- हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी, उर्दू, और भोजपुरी

कार्य- भवन्स भगवानदास पुरोहित विद्या मन्दिर, नागपुर में २००५ से संस्कृत विभागाध्यक्ष एवं २०१० से प्राथमिक प्रभारी के पद पर कार्यरत। 'विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के 'अंतरंग' उपक्रम की सहसंयोजिका ।

उपलब्धियाँ और सम्मान-

१. शब्द सुगन्ध सम्मान, २. साहित्यकार स्वाभिमान सम्मान, ३. शब्द कोविद सम्मान, ४. अंतरा शब्द शक्ति गौरव सम्मान, ५. नव सृजन काव्य मंजरी सम्मान, ६. काव्य पल्लव सम्मान, ७. महादेवी वर्मा शक्ति सम्मान, ८. कलम के सिपाही सम्मान, ९. कुण्डलिया विधा रत्न सम्मान, १०. साहित्य साधक सम्मान

प्रकाशन- टाइम्स ऑफ इण्डिया, नवभारत, नागपुर, दैनिक तथा निर्दलीय, भोपाल, दैनिक व लोकजंग, भोपाल, दैनिक में समसामयिक लेख व कविताएँ

गीली माटी (काव्य संग्रह), हाइकु मंथन (साझा), अंजुली रंग भरी (साझा काव्य संग्रह), अन्तर्नाद (काव्य संग्रह), शाकुन्तलम् (खण्ड काव्य), वनबाला शकुन्तला (नाट्यरंग), शून्य और सृष्टि - हाइकु रंग वृष्टि, धुंध की ओर (हाइकु-काव्य बोन्साई), चारु चिन्मय चोका (साझा), नव पल्लव (साझा काव्य संग्रह), आपातकाल में सृजन फुलवारी (काव्य संग्रह), आर्ष विरासत (कथा काव्य)

सामाजिक कार्य -

संस्कृत भाषा के उत्थान के लिए, निःशुल्क वयस्क संस्कृत शिक्षण पाठ्यक्रम का प्रारम्भ किया, जिसमें नागपुर के लेखाकार, डॉक्टर, व्यापारी, प्रकाशक, लेखक, छात्र, गृहणियाँ व सेवानिवृत्त संस्कृतप्रेमी सम्मिलित हुए।

'गीली माटी' काव्य संग्रह रचकर, विक्रय की धनराशि (२०,०००/-) से स्नेहांचल वेदना उपशमन केन्द्र, नागपुर के कैंसर पीड़ितों की आर्थिक सहायता की।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-232-6

मूल्य 90/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स

Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/